भरमौरी लोकगीतों में राग छायाः एक परिचय

निशा शर्मा
शोध छात्रा, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला

सार संक्षेपिका

लोक संगीत वस्तुतः शास्त्र–विहीन कला है। संगीत का मानव जीवन से बहुत गहरा सम्बन्ध है। यह साधारण जन–जीवन, समाज की हृदयगत भावनाओं, प्रेरणाओं और अनुभूतियों को व्यक्त करने की आधुनिक शब्दावली नहीं थी। संगीत की उत्पत्ति मानव की इन अनुभूतियों भावनाओं और प्रेरणाओं को व्यक्त करने के प्रयासों से हुई है। भरमौरी लोक संगीत का अध्ययन करने पर हमें यह मालूम हुआ कि यहां के लोकगीतों का सजीव चित्रण देहातों में खेतों में बिजाई, कटाई के समय, विवाह आदि अवसरों पर देखने को मिलता है। प्रातः से सांय तक प्रत्येक क्रियाकलाप में तथा जन्म से मृत्यु तक समस्त जीवन में लोक संगीत प्रभावी रहा है। जीवन की सभी छोटी–बड़ी घटनाओं के साथ–साथ गृहस्थ जीवन की प्रत्येक लीला जिसमें सास–बहु, ननद–भावज, पति–पत्नी, भाई–बहन, माता–पुत्री, पिता–पुत्र आदि मधुर एवं कटु सम्बन्धों का उल्लेख तो यहां के लोक संगीत में विद्यमान रहता है। लोकगीतों में प्रयुक्त स्वरों में सरलता एवं स्वाभाविकता हमेशा निहित रहती है। स्वरों के विस्तार की अपेक्षा कम और सीधे–सीधे स्वरों का लगाव रहता है। स्वरों में वनावटीपन नहीं अपितु स्वरों का सीधा प्रयोग ही सुन्दरता एवं माधुर्य का सबसे बड़ा उपकरण होता है। भरमौरी लोकगीतों की धुनों में प्राण होते हैं। लोक गायक जब सादे ढंग से लोकगीत गाते हैं तो उनके गीतों में वह आकर्शण होता है कि चलते हुए पथिक को पल भर रूकने के लिए विवश होना पड़ता है।

संगीत का मानव जीवन से बहुत गहरा सम्बन्ध है। यह साधारण जन–जीवन, समाज की हृदयगत भावनाओं, प्रेरणाओं और अनुभूतियों को व्यक्त करने की आधुनिक शब्दावली नहीं थी। संगीत की उत्पत्ति मानव की इन अनुभूतियों भावनाओं और प्रेरणाओं को व्यक्त करने के प्रयासों से हुई है।

प्राचीन काल के लोकगीतों में बहुत कम शब्दों और स्वरों का प्रयोग मिलता है। एक तरह की धुन को बार–बार दुहराया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि सभ्यता और संस्कृति के विकास के प्रारंभिक चरणों में भाषा इतनी विकसित नहीं थी जितनी की आज है। दूसरा कारण यह है कि ''भाव'' लोक संगीत और लोक–कलाओं की आत्मा रही है। लोक संगीत समाज का चित्र जितने सक्ष्म तरीके से प्रस्तुत करते हैं उतना अन्य कोई भी लोक साहित्य और लोक कला नहीं।

लोकगीतों में सामाजिक जीवन के सुख–दुःख, ईर्ष्या–द्वैष, प्रेम–घृणा, कटुता–मधुरता, आलोचना तथा प्रशंसा सब कुछ निहित रहते हैं। लोकगीत जन द्वारा विशेष परिस्थिति, स्थल, कर्म तथा संस्कार के समय हुई अनुभूतियों की लयपूर्ण सामुहिक अभिव्यक्ति है। लोक संगीत की व्यापकता के सम्बन्ध में महर्षि भरत का कथन है, ''अपने ग्रन्थ नाट्य शास्त्र में मैंने जो कुछ नहीं कहा है, वह बुद्धिमानों को लोक से ग्रहण कर लेना चाहिए'' इससे स्पष्ट होता है कि लोक गुरूओं का भी गुरू है।

भरमौरी लोक संगीत का अध्ययन करने पर हमें यह मालूम हुआ कि यहां के लोक गीतों का सजीव चित्रण देहातों में खेतों में बिजाई, कटाई के समय, विवाह आदि अवसरों पर देखने को मिलता है।

प्रातः से सांय तक प्रत्येक क्रियाकलाप में तथा जन्म से मृत्यु तक समस्त जीवन में लोक संगीत प्रभावी रहा है। जीवन की सभी छोटी–बड़ी घटनाओं के साथ–साथ गृहस्थ जीवन की प्रत्येक लीला जिसमें सास–बहु, ननद–भावज, पति–पत्नी, भाई–बहन, माता–पुत्री, पिता–पुत्र आदि मधुर एवं कटु सम्बन्धों का उल्लेख तो यहां के लोक संगीत में विद्यमान रहता ही है, अपितु प्राकृतिक सौन्दर्य, प्राकृतिक घटनाएं, दुर्घटनाएं एवं प्रेम–प्यार भी इस क्षेत्र के लोकगीतों में भक्ति भावना तथा आध्यात्मिक भावधारा का विशेष समावेश दृष्टिगोचर होता है।

भरमौरी लोक–संगीत में सरसता और माधुर्य काफी रहता है। स्वरों की व्यवस्था अत्यन्त सरल एवं स्वाभाविक है। यहां के लोकगीतों में स्वरों का आरोहावरोह सरल है। इसमें स्वरों का वक्र प्रयोग बहुत कम होता है, किन्तु स्वरों का अंतराल अवश्य ही कुछ मिश्रित अवस्था में मिलता है। इनके लोकगीतों में स्वरों का स्वरूप प्रायः सारे ग रे, रे ग सा रे, रे सा ग प ध, म ग सा, नि॒ प॒, सा रे ग रे ग रे ग रे सा इस प्रकार ज्यादा मिलता है। संगीत के अधिकांश लोकगीतों की धुनों में प्रायः चार, पांच, तथा छः स्वरों का प्रयोग हुआ है तथा लोकगीतों के शेष भाग के कदाचित ऐसे भी लोक गीत उपलब्ध है, जिसकी धुन मात्र दो या तीन स्वरों से निर्मित हुई है। उदाहरण के लिए एक सांस्कारिक गीत प्रस्तुत है जिसमें केवल दो ही स्वर प्रयुक्त हुए हैं :–

सा – – ग ग सा ग ग सा – – ग ग सा सा – ग सा ग सा – – – –

ते रा – – भा – ई ब लो – ति जो ते – ल सिं ज दा – –

सांस्कारिक गीतों के अन्तर्गत ऐसे अनेक गीत उपलब्ध हैं, इन गीतों में मुख्यतः विलावल, खमाज, काफी, कल्याण थाट के स्वर प्राप्त होते हैं। इन गीतों में प्रधान रूप से शुद्ध स्वरों का ही प्रयोग मिलता है। कोमल स्वरों में निशाद तथा गंधार का प्रयोग सर्वाधिक है। कोमल, ऋषभ धुन पर आधारित मनोरंजन प्रधान गीतों की राग वाचक स्वरावलियों में तीव्र मध्यम् का प्रयोग हुआ है इन गीतों में तीव्र मध्यम प्रायः– प प ध प मे ग रे ग ग प मे ग रे सा – इस प्रकार प्रयुक्त हुआ है। कतिपय गीतों में गंधार तथा निषाद स्वरों के दोनों रूप प्रयुक्त हुए हैं। अधिकांश लोकगीत प्रायः मन्द्र सप्तक तथा मध्य–सप्तक के पूर्वांग में ही गाए जाते हैं। सांस्कारिक लोकगीत इस तथ्य के उपयुक्त उदाहरण हैं। विविध गीत, प्रणय–गीत तथा विशिष्ट व्यक्तियों से सम्बन्ध गीत आदि वर्गों के गीतों के स्वर अवश्य ही तार–सप्तक की ओर संकेत करते हैं। इन लोकगीतों में स्वरों की उठा–पटक, तान, गमक तथा अनेक प्रकार के अलंकारों आदि का सर्वथा आभाव पाया जाता है।

भरमौरी लोक संगीत की विधाओं में नाद का परिभाशित स्वरूप नैसर्गिक रूप में व्याप्त मिलता है, तथापि नाद के स्वरूप पर यहां की भौगोलिक परिस्थितियों जलवायु तथा स्थानीय परम्पराओं आदि का प्रर्याप्त प्रभाव पड़ा है। स्वच्छ वातावरण तथा मंद शान्त एवं पर्वतीय जीवन षैली के समान ही यहां के संगीत में सुरीलापन, गम्भीरता, लोच तथा टिकाव आदि गुण परिलक्षित होते हैं। यहां का साधारण जन–मानव स्वर वैचिन्य से भले ही परिचित न हो, किन्तु इन्होंने अपनी मानसिक भावनाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति हेतु नाद की मूलभूत विशेषताओं के यथोचित समावेश से अपनी नादात्मक एवं संगीतात्मक सूझ का परिचय अवश्य ही दिया है। भरमौरी लोकगीतों में सर्वप्रथम अनिबद्ध प्रकार के

लोकगीतों में आलापचारिता का स्वरूप देखने को मिलता है। यहां के सांस्कारिक लोकगीत अनिबद्धता के उपयुक्त उदाहरण हैं। लोक संगीत के मर्यादित स्वरूप को दृष्टिगत रखते हुए इनकी गेयता में ऐसी विशेषताओं की ओर संकेत किया जा सकता है जो आलाप की शास्त्रोक्त प्रक्रिया में भावोत्पादकता के सबल साधन हैं अथवा जिन विशेषताओं में शास्त्रोक्त आलाप का सा स्वरूप झलकता है।

भरमौरी लोक संगीत में केवल षड्ज–मध्यम् भाव से संवाद करते स्वरान्तरों का ही सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। षड्ज–पंचम भाव से संवाद करते स्वरान्तरों का प्रयोग अल्पत्व है। इसके विपरीत षड्जान्तर भाव से युक्त स्वरों का प्रयोग सा–प भाव की अपेक्षा अधिक हुआ है। षड्ज–मध्यम भाव की प्रबलता का मुख्य कारण यहां के लोकगीतों का मुख्यतः पहाड़ी, पीलू, झिंझोटी, सारंग आदि रागों की स्वरावलियों में निबद्ध होना है। इसी प्रकार तिलग कमोद रागों की छाया लिए लोकगीतों में षड्जांतर भाव भी अधिकाधिक महत्व दिए हुए हैं। यहां के सांस्कारिक तथा अन्य चंचल प्रकृति के लोक गीतों में मन्द्र पंचम तथा मध्यम् षड्ज की संगति अत्यन्त मधुर प्रतीत होती है। एक गीत उदाहरणार्थ प्रस्तुत है जिसमें धुन की रंजकता मात्र षड्ज तथा मन्द्र पंचम पर मुख्यतः निर्भर है।

प – – सा प़ रेसा सा – रे सारे सा रे सा रे

तू मे रा मा मा –– आंऊ ते री –– भा ण – – जी

रे सारे सा – – – साप़ रे सा रे रे सा रे सा – – –

बो – – भ ण जी जो दाज कै – – दे – ला ओ– –

लोकगीतों की चुनिंदा धुनों को चुन कर शास्त्रीय नियमों में बांधकर रागों में परिवर्तित किया है। रागों में कम से कम पांच स्वरों का होना अनिवार्य होता है। जबकि लोक गीतों में तीन चार स्वर भी प्रयुक्त होते हैं। इसलिए आवष्यक नहीं कि सभी लोकगीतों में किसी राग की छाया हो। पर अधिकांश लोकगीत तीन चार स्वरों के होते हुए भी रागों की छाया झलकाते हैं। एक गीत प्रस्तुत है, जिसकी स्वरलिपि तिलक कामोद राग के स्वरूप का लगभग स्टीक उदाहरण है –

1 2 3	4 5 6 7	8 9 10	11 12 13 14
			ग रे ग –
			शि व कै ऽ
म – –	ग रे ग रे	सा सा –	ग रे ग –
ला ऽ ऽ	सों ऽ ऽ के	वा सी ऽ	धौ ऽ ली ऽ
म – –	ग रे ग रे	सा – –	नि़ – – –
धा ऽ ऽ	रो ऽ ऽ के	रा ऽ ऽ	जा ऽ ऽ ऽ

प़ – –	नि़ – नि़ –	म – –	ग रे ग ग
हं ऽ ऽ	रि ऽ ना ऽ	म ऽ ऽ	ह रि ऽ ऽ
नि़ नि़ –	सा – – –	– – –	– – – –
ना ऽ म	ते ऽ रा ऽ	ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ
	2	0	3

लय की दृष्टि से भरमौर में निबद्ध और अनिबद्ध दोनों प्रकार की गान परम्परा प्रचलित है। भरमौरी निबद्ध गीतों में मसुधा एवम् ऐंचली गायन निबद्ध रहते हैं। इसमें बिलम्बित दादरा, मध्य लय में कहरवा तथा द्रुत लय में खेमटा, मध्यम लय में दीपचंन्दी तालों का प्रयोग होता है। लय के लिए ढोल नगाड़े खंजरी रूबाना, कंस्सी ढोलक एवम् स्वर देने के लिए शहनाई व बांसुरी का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए कहरवा ताल में बंधी गई एक स्वरलिपि जो कि राग पीलू की छाया स्पष्ट कर रही है इस प्रकार है –

1 2 3 4	5 6 7 8
ग – – रे	रे सा – प़
नि ऽ का ऽ	जि ऽ णा ऽ
प़ – – –	नि़ – सा –
झां ऽ ऽ झ	णू ऽ ब ऽ
ग – – रे	सा रेसा नि़ सा
णा ऽ ऽ ऽ	णा ऽऽ ऽ ऽ
ग – – –	ग – प म
हो ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ

इस तरह यह कहरवा ताल में निबद्ध एक गीत है जो कि सारे ग रे, नि़ सा ग नि़ सा ग नि़ सा स्वर उत्पन्न कर रही है जिससे कि राग पीलू की छाया झलक रही है।

लोकगीतों में प्रयुक्त स्वरों में सरलता एवं स्वाभाविकता हमेशा निहित रहती है। स्वरों के विस्तार की अपेक्षा कम और सीधे–सीधे स्वरों का लगाव रहता है। केवल एक दो ही चुने हुए स्वरो का सामजस्य पूर्वक प्रयोग रस पैदा करने के लिए काफी रहता है। स्वरों में वनावटीपन नहीं अपितु स्वरों का सीधा प्रयोग ही सुन्दरता एवं माधुर्य का सब से बड़ा उपकरण होता है। भरमौरी लोकगीतों की धुनों में प्राण होते हैं जीवन का सच्चा आनन्द मिलता है। यहां के भोले–भाले लोगों ने अपने गीतों में स्वरों के माध्यम से अपनी सम्पूर्ण सम्वेदनाओं और अनुभूतियों को स्वाभाविक ढंग से व्यक्त किया है।

लोकगायक जब सादे ढंग से लोकगीत गाते हैं तो उनके गीतों में वह आकर्शण होता है कि चलते हुए पथिक को पल भर रूकने के लिए विवश होना पड़ता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

डॉ. राम स्वरूप शांडिल्य, हिमाचल प्रदेश के लोक संगीत की परम्पराएं सोलन जनपद के संदर्भ में निर्मल पब्लिकेशन दिल्ली

अमर सिंह रणपतिया, गद्दी जनजातीय लोक संस्कृति एवं कलाएं, हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी, शिमला

नन्द कुमार, गद्दी जन–जीवन, ऐतिहासिक एवम् सामाजिक परम्परा, बन्धु भारती प्रकाशन, सेक्टर–19 ए, मध्य मार्ग चंडीगढ

Pratibha Spandan